भक्ति आंदोलन - एक परिदृश्य

भारती कोरी

भारतीय इतिहास में सामाजिक, धार्मिक एवं साहित्यिक दृष्टी से भक्ति आंदोलन एक युगांतकारी घटना थी। जिसने भारतीय समाज एवं दर्शन को नये सिरे से परिवर्तित किया। यह वही युग था जिसके कारण तुलसीकृत 'रामचरितमानस' प्रत्येक भारतीय का कंठहार बनी, जिसने मंदिरों की प्रार्थनाओं को सूर के पदों से सजाए। जिसने कबीर, रैदास की रचनाओं को सामान्य जन-जीवन से जोड़कर समाज के उपेक्षित वर्ग को अपनी आस्मिता का भान कराया। जिसने चैपालों को जायसी से आख्यान दिये। एक मायने में यह एक सांस्कृतिक व सामाजिक क्रान्ति थी। जिसने संपूर्ण भारत वर्ष को एक नये तरीके से सोचने पर विवश किया।

भक्ति, लौकिक जगत की सर्वोच्च उत्कृष्ठ, अलौकिक भाव, वस्तु या उपलब्धि है। मानवीय सभ्यता के प्रथम एवं प्रकृति के साथ-साथ स्वयं के स्थायित्व शोध के साथ ही मानवीय जीवन में भक्ति का प्रवेश हुआ। भक्ति 'शब्द' संस्कृत की भज् धातु में क्तिन् प्रत्यय के संसर्ग से बना है। जिसका अर्थ है भगवान की सेवा करना।"[1] ईश्वर के प्रति परम अनुराग एवं नि:शेष भाव से आत्म समर्पण ही भक्ति है। भक्ति ईश्वर को प्राप्त करने का सहज मार्ग है। महर्षि शांडिल्य के अनुसार- "ईश्वर में परानुशक्ति अर्थात् अपूर्व एवं प्रवृष्ट अनुराग रखने को ही भक्ति कहते हैं"[2] यह ईश्वर से जुड़ने, उसे समझने एवं अपने इष्ट से एकाकार होने का साधन है। भक्ति का मार्ग श्रद्धा से प्रारंभ होकर समर्पण की ओर जाता है। नारदभक्ति सूत्र के अनुसार- "भगवान के प्रति परमप्रेम ही भक्ति है।"[3] भक्ति के फलस्वरूप वह अपने को भूलकर सब के प्रति समर्पण स्थापित कर सकता है। प्राचीन मनीषियों से लेकर आधुनिक विद्वानों एवं आध्यात्मिक गुरूओं ने भक्ति को विविध रूपों में परिभाषित किया है-

श्रीमाधवाचार्य के अनुसार- "भगवान में महात्मज्ञान पूर्वक सुदृढ़ और सतत् स्नेह ही भक्ति है। इससे अधिक मोक्ष का कोई दूसरा उपाय नहीं है। यही परमप्रेम जो पूर्णज्ञान से उत्पन्न होता है और सर्वदा विद्यमान रहता है, भक्ति कही जाती है।"

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में- "श्रद्धा और प्रेम के योग का नाम ही भक्ति है।"[4]

डॉ. नगेन्द्र के अनुसार- "स्नेहपूर्वक ध्यान ही भक्ति है।"[5]

इस प्रकार भक्ति आत्मा एवं परमात्मा के स्नेह एवं श्रद्धायुक्त संबंधों का नाम है। भक्ति अलौकिक आनंद का चिर स्त्रोत एवं आत्मिक उन्नति का साधन है। भक्ति का स्वरूप बहुआयामी है जो श्रद्धा, आनंदा और मोक्ष की आकांक्षा, विरक्ति कला एवं विज्ञान के विविध रूपों से निर्मित है। लाक्षणिक रूप में भक्ति दो प्रकार की मानी जाती है- वैधी भक्ति एवं रागत्मिका भक्ति। वैधी भक्ति में पांच अंग स्वीकार किये गये हैं, यथा- उपास्य, उपासक, उपासना, अर्चना और मंत्रजाप। भगवच्चरणरविदों में नैसर्गिक भावानुसार उत्पन्न प्रेम से जो भक्ति होती है उसे रागात्मिका भक्ति कहते हैं। प्रेमभक्ति को सरल, सत्य एवं साधारण पात्र के लिए भी ग्रह बनाता है। "भक्ति में प्रेम का प्राधान्य होने पर भक्ति के अन्य उपर्युक्त सभी रूप गौण हो जाते हैं।"[6] वेदों में इन्द्र, मिश्र, वरूण, अग्नि के रूप में एक ही परमात्मा के विविध गुणों के आधार पर अनेक रूपों की चर्चा की गई है। जिसमें मानव एवं देवताओं के मध्य प्रेम, भक्ति और मित्रता की कल्पना की गई है। वेदों के पश्चात् अन्य ग्रंथों एवं आध्यात्मिक रचनाओं में भक्ति का स्वरूप एवं क्षेत्र व्यापक होता चला गया।

गीता में भक्त, भगवान और भक्ति के स्वरूप की विस्तृत व्याख्या है। "गीता में प्रबल मार्ग को ही भक्ति

कहा गया है। गीता ज्ञानमार्ग एवं भक्तिमार्ग में विरोध नहीं देखती। अव्यक्तोपासना (ज्ञानमार्ग) और व्यक्तोपासना (भक्तिमार्ग) वास्तव में एक ही लक्ष्य तक जाने के दो मार्ग हैं।"[7]

श्रीमदभागवत में नौ प्रकार की भक्ति की चर्चा की गई है। यथा-

"श्रवण कीर्तन विल्णो, स्मरणः पाद सेवनम्
अर्चनं वन्दन दारूत सख्यभात्भनिवेदनम्
गुण महाक्यात्ति रूपासक्ति पूजासक्ति
स्मरणासक्ति दास्यासक्ति पूजासक्ति
स्मरणासक्ति दास्यासक्ति, तन्मयतोसक्ति
परमविरहासक्ति रूपाएकधा दषधासक्ति"[8]

भक्ति आंदोलन में अनेक धर्माचार्यों ने विभिन्न मतों एवं सम्प्रदायों का प्रवर्तन किया। जिनमें भक्ति के अनेक स्वरूपों के दर्शन होते हैं। भक्ति के स्वरूप को स्पष्ट करने वाले प्रमुख सम्प्रदाय जैसे - अद्वैतसम्प्रदाय, श्री सम्प्रदाय, ब्रह्मसम्प्रदाय, बल्लभसम्प्रदाय, हँससम्प्रदाय, गौड़ीयसम्प्रदाय, भेदाभेद दार्शनिक मत पर आधारित हैं। उक्त मतानुसार भगवान कृष्ण ही विभिन्न रूपों में अवतीर्ण हुए हैं। अन्य प्रमुख सम्प्रदाय भी हैं, जो भक्ति को अधिक महत्ता प्रदान करते हैं। रूप्रसम्प्रदाय (विष्णुस्वामी), सखी सम्प्रदाय (हरिदास), राधावल्लभ सम्प्रदाय (गोस्वामी), रसिकसम्प्रदाय (अग्रदास), उद्धतिसम्प्रदाय (स्वामीसहजानंद), तत्सुखी सम्प्रदाय (जीवाराम) आदि। उक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि भक्ति का अर्थ एवं स्वरूप इन्द्रधनुषीय है। विभिन्न धर्माचार्यों, संतों एवं विद्वानों ने इसे विविध रूप में अभिव्यक्त किया है। भक्तिकाल के उद्भव को हिन्दुस्तान में मुसलमानों के वर्चस्व से सीधे तौर पर जोड़ना अर्धसत्य है। क्योंकि मुसलमानों के आक्रमणों से अप्रभावित दक्षिण भारत में भक्तिधारा अपने पूर्ण वेग में प्रवाहित हो रही थी। जहाँ आलवार संत भक्ति सरिता के मूल प्रेरणा बने। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार- 'मुलसमानों के आने के पश्चात् भारतीय सामाजिक-धार्मिक व्यवस्था कर्मकाण्ड ऊँच-नीच जातिवाद की संकीर्णताओं से घिर गई। तात्कालीन सामाजिक व्यवस्था में निम्न जातियों के पास अपनी अस्मिता को बनाये रखने के लिए नाथों और सिद्धों के पास जाने के अलावा दूसरा कोई मार्ग शेष न रहा। उच्च वर्ग प्रायः इनके प्रभाव से मुक्त रहा। इस धार्मिक उथल-पुथल के बीच भक्त या संतों का एक ऐसा समूह भी खड़ा हो रहा था, जो बिगड़ते सामाजिक धार्मिक स्थितियों को सामान्य करने में लगा हुआ था। प्रेमस्वरूप ईश्वर की भक्ति सामने लाकर भक्त कवियों ने हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों को मनुष्य के सामान्य रूप में दिखाया और भेदभाव के दृश्यों को हटाकर उन्हें पीछे कर दिया। यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि भक्ति आंदोलन का मूल स्त्रोत दक्षिण से प्रस्फुटित होता है। जहाँ बौद्धों एवं जैनों का विरोध करने के लिए नायनयारों तथा आलवारों ने मिलकर एक धार्मिक आंदोलन प्रारंभ किया'।

श्रीमद्भागवत माहावूय में उपलब्ध अनेक श्लोक व पंक्तियाँ भक्तिकाल के उद्भव को निर्धारित करती है।

"उत्पना द्रविणे सांह वृद्धिं कर्णाटके गता
क्वचित्क्य चिन्महाराष्ट्रे गुर्जरे जीर्णतां गता"[9]

अर्थात् भक्ति का उदय द्रविड़ प्रदेश से हुआ जिसे रामानंद उत्तर भारत में लेकर आये और उसे कबीरदास द्वारा प्रसारित किया गया। अतः हिन्दी साहित्य जगत में भक्ति आंदोलन का उद्भव आलवार भक्तों की परम्परा से हुआ है। भक्ति आंदोलन भारतीय इतिहास की सर्वाधिक महत्वपूर्ण साहित्यिक धार्मिक घटना थी। जिसने संपूर्ण देश को भक्ति सूत्र में बांधने का कार्य किया। अतः भक्ति आंदोलन ने भारत के समस्त क्षेत्रों-प्रांतों में दार्शनिक मतों, साहित्यिक विचारधाराओं, सामाजिक व्यवस्थाओं को नये सिरे से संवारने एवं व्यक्त करने का कार्य किया। भक्ति आंदोलन धार्मिकता के आवरण में संपूर्ण भारतवर्ष के साधारण व्यक्तियों की व्यथा-कथा का आंदोलन बनकर उभरा। दक्षिण भारत में रामानुज ने इसकी नींव रखी तो उत्तर-भारत में उनके शिष्य रामानंद भक्ति आंदोलन के पुरोधा बने। भक्ति की यह अनवरत धारा गुजरात, पूर्वभारत, मध्यभारत सहित भारत के समस्त भागों में समान रूप से प्रवाहित हुई।

महाराष्ट्र ने संत नामदेव एवं ज्ञानदेव ने भगवद् भक्ति का प्रचार किया। इन्होंने अपनी रचनाओं में मराठी के साथ-साथ हिन्दी भाषा को भी अपनाया। इनकी

रचनाओं में सगुण एवं निर्गुण दोनों भक्तिरूप दृष्टिगोचर होते हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में -"नामदेव सीधे-सादे सगुण भक्तिमार्ग पर चले जा रहे थे पर पीछे उस नाथपंथ के प्रभाव के भीतर भी ये लाए गये जो अंतर्मुखी साधना द्वारा सर्व व्यापक निर्गुण ब्रह्म के साक्षात्कार को ही मोक्ष का मार्ग मानता था।"[10]

भक्ति की अलौकिक सरिता ने संपूर्ण देश को भक्तिभाव से सिचिंत किया। किन्हीं क्षेत्रों में साकार ब्रह्म की उपासना का प्रभाव अधिक रहा तो किन्हीं क्षेत्रों में निराकार ब्रह्म को अपनाया गया। निर्गुण धारा की पहली शाखा संतकाव्य या ज्ञानमार्गी के नाम से जानी जाती है जिन्होंने साधारण और अव्यवस्थित भाषा में धर्म एवं समाज सुधारक के संदर्भ में काव्य रचना की। इसकी दूसरी शाखा सूफी काव्यधारा जिसे प्रेममार्गी, प्रेमाश्रयी, प्रेमाख्यानक, काव्यपरम्परा एवं रोमांसिक कथा काव्य परम्परा आदि नामों से भी जाना जाता है। भक्तिकाल की दूसरी प्रमुख धारा सगुण भक्तिधारा है जो कृष्णभक्ति काव्य एवं राम भक्तिकाव्य दो शाखाओं में विभक्त है। सगुणभक्ति धारा की दूसरी शाखा है- राम भक्तिशाखा। वाल्मीकि द्वारा संस्कृत भाषा में रचित रामायण को रामकथा का मूल स्त्रोत स्वीकार किया जाता है।

इस प्रकार भक्ति आंदोलन में संतकाव्य, सूफीकाव्य, कृष्णभक्ति तथा रामभक्ति काव्य के रूप में दक्षिण से उत्तर तथा पूर्व से पश्चिम तक संपूर्ण देश को भक्ति की अविरल धारा से सराबोर कर दिया। परिणामस्वरूप भारत का कोना-कोना भक्तिमय हो उठा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. डॉ. मुंशीराम शर्मा - भक्ति का विकास, चौखम्बा विद्या भवन वाराणसी, 1979, पृ. 64
2. पाणिनी अष्टाध्यायी 3/3/94
3. नारदभक्तिसूत्र-2
4. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल - चिंतामणि भाग-1,पृ. 32
5. डॉ. नगेन्द्र - हिंदी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपर बैक्स, नोएडा, 2012, पृ.107
6. श्री चैतन्यमहाप्रभु- प्रेमापुपर्थी महान
7. बालगंगाधरतिलक-गीतारहस्य, पृ. 433
8. कृष्णदास भारद्वाज- वेदों में नवधाभक्ति, पृ. 31
9. श्रीमद्भागवत महात्म्य, अध्याय-1 श्लोक 48
10. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल - हिन्दी साहित्य का इतिहास, देवनगर प्रकाशन, 2009, पृ. 94-95

संपर्क : भारती कोरी, शोधार्थी, हिन्दी विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर (म.प्र.) 470003
01071986bharti@gmail.com